वीर कवि

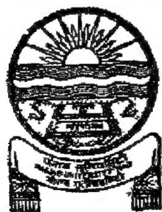


Equestrian portrait of Guru Gobind Singh

मूल्य रु १.८० पैसे

वीर कवि दशमेश

डा० जयभगवान गोयल
रीडर, हिन्दी विभाग
पंजाब यूनिवर्सिटी स्नातकोत्तर प्रादेशिक केन्द्र, रोहतक।



पंजाब यूनिवर्सिटी
पब्लिकेशन ब्यूरो
चण्डीगढ़

Published by
BAL KRISHNA, M.A., *Secretary*,
Publication Bureau, Panjab University, Chandigarh

Printed by
PANNA LAL KHANNA, *Manager*,
Panjab University Press, Chandigarh.

उत्तर-भारत पर यवनों के आक्रमण लूट-मार करने और राज-सत्ता स्थापित करने के लिये तो थे ही, इस्लाम धर्म का प्रचार और प्रसार भी उनका एक मुख्य उद्देश्य था। इतिहास इस बात का साक्षी है कि इस्लाम का झंडा लिए हुए मुसलमान-सैनिक जिस देश मे भी गए, वहा के धर्म और सस्कृति को विनष्ट कर उन्होंने वहां इस्लाम की स्थापना की। जिस समय भारत पर उनके आक्रमणों का जोर बढ़ा, किसी केन्द्रीय राजनैतिक शक्ति के अभाव मे भारत को उनसे हारना अवश्य पड़ा, परन्तु भारतीय समय पा पा कर वे निरन्तर उन से जूझते रहे। इस लिए मध्ययुगीन भक्ति-आन्दोलन को 'हारी हुई' या पराजित मनोवृति की देन कहना सर्वथा भ्रामक है। भारतीयों की मनोवृति 'हारी हुई' कदापि नही थी। वे हारे अवश्य थे, परन्तु उन्होने हार बिल्कुल नही मानी थी।

विदेशी आक्रमण से रक्षा का उत्तरदायित्व शासक वर्ग पर ही होता है। परन्तु इस युग में भारत की राजनैतिक एव सैनिक शक्ति जर्जरित एवं क्षीण थी। इसलिए शासक वर्ग से रक्षा की पूर्ण आशा नही की जा सकती थी। दूसरे, यवनो का आक्रमण राजनैतिक अधिपत्य की अपेक्षा सास्कृतिक दृष्टि से अधिक घातक था। भारत के तत्व चितको एवं मनीषियो ने यह अनुभव किया कि सैनिक क्षेत्र में यवनो की विशाल-वाहिनी का मुकाबला करने वाले शासक के अभाव मे सास्कृतिक धरातल पर इस्लामी सस्कृति के अभियान का मुकाबला करना बहुत जरूरी है। क्योंकि उन्हे डर था कि कही ऐसा न हो कि समस्त अरब देश की भाति भारतीय धर्म-दर्शन और संस्कृति को नष्ट-भ्रष्ट कर यहा भी इस्लाम की स्थापना न हो जाए। वस्तुतः मध्यकालीन भक्ति-आन्दोलन इसी स्वातन्त्र्य-भावना एव सांस्कृतिक चेतना का परिणाम है। समस्त देश जैसे एक होकर इस अभियान के लिए उठ खड़ा हुआ। इस का प्रमाण है सभी भारतीय भाषाओं मे रचित तत्कालीन साहित्य। भारत की लगभग सभी भाषाओ में उस युग मे जो साहित्य लिखा गया उसमें भक्ति का

स्वर ही प्रमुख है। हिन्दी के अतिरिक्त पंजाबी, गुजराती, राजस्थानी, मराठी, उड़िया, मैथिली, बगला, आसामी आदि आर्य-भाषाओ मे ही नही दूर दक्षिण की तमिल, कन्नड, मलयालम आदि द्रविड़ भाषाओ मे भी अत्यधिक परिमाण मे भक्ति-साहित्य लिखा गया और आश्चर्य इस बात से होता है कि इस सारे साहित्य की मूल-भावना, एवं स्वरूप एक सा है। क्या यह सास्कृतिक एकता, भावनाओं एव अभिव्यक्तियों का साम्य भारत की राष्ट्रीय एकता एवं उसकी जागृति का सूचक नहीं है। इस आन्दोलन को एक शक्तिशाली राष्ट्रीय आन्दोलन के ही रूप में स्वीकर किया जाना चाहिए। वस्तुतः उस युग में सांस्कृतिक एकता ही राष्ट्रीयता (Nationalism) की द्योतक थी, राजनैतिक एकता की भावना ने बहुत बाद मे जोर पकड़ा। इस शक्तिशाली सास्कृतिक–राष्ट्रीय आन्दोलन का ही यह परिणाम है कि आज भी शताब्दियो के यवन-अधिपत्य के बावजूद भारतीय संस्कृति जीवित है। उसकी वह दशा नही होने पाई जो अरबों की हुई थी। मै समझता हू कि मध्य युगीन भक्ति-आन्दोलन का मूल्याकन एक वृहद एव व्यापक राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य मे होना चाहिए।

पजाब मे इस आन्दोलन को संचालित करने का श्रेय सिखमत के सस्थापक—गुरु नानकदेव को है। उनकी चितनधारा में भी हमे भक्ति के उन्ही मूल तत्वो का दिग्दर्शन होता है, जो अन्य प्रदेशो के भक्ति-आन्दोलन में विद्यमान थे। एक विशिष्टता के दर्शन उनमे अवश्य होते है। सिक्ख-साधना मे वीर-भावना की झलक आरम्भ से ही मिलती है। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि यवन-आक्रमणकारियो का मुकाबला पजाब को ही करना पड़ता था और वह साहस और उत्साह उनके अवचेतन में हर समय मौजूद रहता था। कुछ भी हो सिक्ख-साधना के अन्तर्गत यह वीर-भावना धीरे धीरे विकसित होती गई और 'खालसा' की स्थापना से वह परिपक्व होकर प्रकट हुई।

सिक्खमत मूलतः आध्यात्मिक आन्दोलन था, इसमे कोई सन्देह नही। परन्तु गुरु गोबिन्दसिंह को वीर आचरण अपनाना पड़ा, इसका उत्तरदायित्व उस युग की परिस्थितियों पर है। जिस समय गुरु गोबिन्दसिंह का प्रादुर्भाव हुआ देश अत्यन्त दयनीय स्थिति से गुजर रहा था। इस समय औरगजेब

सत्तारूढ़ था । उससे पूर्व के मुगल शासक कुछ धर्म-सहिष्णु एवं उदार थे। विशेष रूप से अकबर ने धर्म-स्वातन्त्र्य एव निरपेक्षता की नीति को अपनाया था, परन्तु औरंगजेब की धर्मांधता, असहिष्णुता, और अत्याचार से हिन्दू जनता आतंकित थी । निर्बल और असहाय भारतीयो को अपमान और अवमानता का जीवन व्यतीत करना पड रहा था । या इस्लाम कबूलो या पराधीनता की कटुता झेलो । इस शोषण और दमन के विरुद्ध दक्षिण में सिरजा शिवा जी के नेतृत्व में मराठो ने और पजाब मे गुरु गोविन्दसिंह के नेतृत्व मे सिक्खो ने एक शक्तिशाली विद्रोहात्मक स्वातन्त्र्य आंदोलन का सूत्रपात किया । गुरु गोबिन्दसिंह ने शाही फरमान की कोई चिता न करते हुए अपना झंडा लहरा कर और धौसे की धुकार से स्वतत्रता और विद्रोह की घोषणा कर दी । (उन दिनों कोई भी हिन्दू अपना झडा नही लहरा सकता था और न ही धौसा बजा सकता था) । शिवा जी का विरोध मुख्यतः राजनैतिक (सैनिक) था, जबकि गुरु गोविन्दसिंह सास्कृतिक एव राजनैतिक (सैनिक) दोनो मोरचो पर लड रहे थे । हिन्दू धर्म की रक्षार्थ गुरु गोबिन्दसिंह के पिता श्री गुरु तेग बहादुर अपना बलिदान दे चुके थे, परन्तु उनके शातिपूर्ण बलिदान से क्रूर मुगल शासक ज़रा भी नही पसीजा, इसलिए विवश होकर गुरु गोबिन्दसिंह को 'सर्वलोह' का आश्रय लेना पडा और उन्होने 'खालसा' पंथ की स्थापना की। स्वयं खड्ग धारण करके उन्होने चण्डी-स्वरूपा भारत की सुप्त वीर शक्ति का आह्वान किया । परिणाम-स्वरूप यवनो से उन्हें कई युद्ध करने पड़े जिनका वर्णन उन्होंने 'विचित्र नाटक' में किया है ।

इस समय हिन्दुओं की अपनी धार्मिक अवस्था भी वैष्णवों, शैवो, शाक्तो, सिद्धो, नाथों, संतों आदि के संघर्ष के कारण जर्जरित थी । साधारण जनता अनेक मत-मतान्तरो के चक्कर में फसी हुई, मिथ्याचार, बाह्याडम्बर एव पाखंडपूर्ण साधनाओ को ही वास्तविक धर्म समझने लगी थी और जाति-पाति एव वर्ण भेद के सघर्ष मे उलझे हुए वे पृथक खान-पान और रहन-सहन को ही धर्म का मुख्य अंग मानते थे । जब गुरु गोबिन्दसिंह ने 'खालसा' की स्थापना की और धर्मयोद्धा के उत्साह से जाति-पाति वर्ण-वर्ग भेद, बाह्याचारो एव कर्म-कांड आदि का खंडन करते हुए सब की समानता की घोषणा की तो पहाड़ी राजाओ ने उन्हे धर्म-विरोधी करार दिया और उनके विरुद्ध औरंगजेब

से शिकायतें करने लगे। वास्तव में वे गुरु जी के बढ़ते हुए प्रभाव से भयभीत होने के कारण औरंगजेब की सहायता से उनके दमन का कुचक्र रच रहे थे। औरगजेब स्वय इस सुअवसर की खोज मे था, इसलिए उसने सहर्ष पहाड़ी राजाओं का साथ देना स्वीकार कर लिया। इस संयुक्त मोर्चे के विरुद्ध लड़ने के लिए गुरु जी ने अपने अनुयायियो को संगठित करना आरम्भ किया और उनमे धर्म-युद्ध का उत्साह उत्पन्न करने के लिए अपनी काव्य-शक्ति का भी पूरा उपयोग किया। 'दशमग्रथ' इसी मंगलमय अभियान का एक अग है। वह धर्म-योद्धाओं का प्रेरणा स्रोत है। वीरगाथाकालीन एव भक्तिकालीन साहित्यिक परम्पराओं एवं प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व करने वाला ऐसा काव्य-ग्रथ है, जिसमे पंजाब की तत्कालीन स्वातन्त्र्य-भावना एव सांस्कृतिक चेतना मुखरित हुई है।

कुछ विद्वान सम्पूर्ण 'दशमग्रथ' को ही गुरु गोबिन्दसिंह की कृति मानते है, जबकि अधिकतर विद्वान 'जापु साहिब', 'अकाल उस्तति', 'बचित्र नाटक' (अपनी कथा) आदि कुछ कृतियो को छोड़कर अन्य को उनके दरबारी कवियों की रचना मानते हैं। परन्तु यह अगर मान भी लिया जाए, कि ये सभी रचनाए दशमगुरु कृत नहीं है तो भी यह मानना पड़ेगा कि इन सभी पर उनकी स्वीकृति की मुहर लगी हुई है। उन्होने जिस प्राण-वान सांस्कृतिक चेतना, स्वातन्त्र्य-भावना, राष्ट्रीय-स्वाभिमान एव धर्म-रक्षा का भाव पंजाब के जन-जीवन मे जागृत किया था, उससे सम्पूर्ण 'दशम ग्रंथ' आन्दोलित है।

'दशमग्रथ' में दो प्रकार की वीर-रचनाएं उपलब्ध है। एक ऐतिहासिक प्रबन्ध के रूप मे, जैसे 'विचित्र नाटक' (अपनी कथा) और दूसरी पौराणिक प्रबन्धो के रूप मे जैसे चौबीस अवतार, चण्डी चरित्र उक्ति विलास एवं चण्डी चरित्र द्वितीय, आदि।

'विचित्र नाटक' गुरु गोबिन्दसिह द्वारा चरित्र-काव्य शैली मे रचित एक ऐसा वीर-काव्य है, जिसमे किसी देवी-देवता या अन्य वीर-पुरुष के चरित्र में अनेक अतिमानवीय, अलौकिक अथवा चमत्कारपूर्ण घटनाओं का समावेश करके उसकी वीरता, शौर्य, दृढ़ता, साहस, पौरुष आदि की अतिशयोक्तिपूर्ण

प्रशसा नही की गई, वरन् यह गुरु जी के अपने जीवन से सम्बन्धित है और उसमे 'आत्मकथा' की सी सत्यता, यथार्थता एव सहजता है। तटस्थ आत्म-निरीक्षण एव प्रभावपूर्ण आत्म-अभिव्यक्ति की दृष्टि से यह एक आदर्श, उत्कृष्ट एव विशिष्ट रचना है। यह अत्यन्त विश्वासपूर्ण, स्वच्छ एव आकर्षक शैली मे रचित वीररसात्मक कथा है। मध्यकालीन हिन्दी साहित्य मे इस प्रकार की साहसिक एव ओजस्वी पद्यात्मक आत्मकथा दुर्लभ है। परन्तु इस रचना का उद्देश्य केवल मात्र आत्म-अभिव्यक्ति अथवा आत्म-प्रकाशन नही है, आत्म-विज्ञापन तो बिल्कुल नही। शहीद के पुत्र और शहीदों के पिता सतयोद्धा गुरु गोविन्दसिह ने इस काव्य-ग्रन्थ की रचना असहाय एवं निराश हिन्दू जनता मे जातीय स्वाभिमान, राष्ट्र-प्रेम एव धर्म-रक्षा के उच्च भावो को उत्तेजित करने के महान उद्देश्य से की है।

इस धरातल पर अपने आगमन के उद्देश्य की ओर संकेत करते हुए वे लिखते है कि मुझे गुरुदेव ने धर्म-स्थापन के लिए भेजा है और कहा है कि जहा जहां दुष्टों को देखो उन्हे मार गिराओ[1]। वे हिन्दुओं के मन में यह बात बिठाना चाहते थे कि वे यवनों के अन्याय और अत्याचारों से उनका उद्धार करने के लिए ही यहां आए है। और जो इस धर्म-युद्ध मे उनका साथ देगा, वह (ईश-कार्य में योगदान देने के फलस्वरूप) ब्रह्मलोक को प्राप्त करेगा। उन्होंने यह भी स्पष्ट कहा कि जो कोई भी किसी लोभ के कारण या मुगलो के भय से अन्याय और अधर्म के विरुद्ध लडने से विमुख होकर उनका साथ छोडकर जाएगा, वह अपने दोनों लोको को खराब करेगा। यहां उसका मुह काला होगा[2], मुगल भी उसकी दुर्दशा करेंगे[3], तथा उसका परलोक भी बिगड़ेगा। ऐसे कायरो की उन्होने भर्त्सना की है और उन्हे सचेत भी किया

---

1. हम इह काज जगत मो आए। धरम हेत गुरदेव पठाए।
   जहां तहा तुम धरम बिथारो। दुसट दोखियनि पकरि पछारो।
   (बिचित्र नाटक, ७.२६).
2. वही, १४.२-७
3. वही, १४:१८

है कि एक बार साथ छोड़ देने पर फिर वे उसकी रक्षा नही करेंगे[1], भले ही उन्हे मुगल लूटे या अपमान करके अन्य कष्ट दें[2]। वे उन्हे यह विश्वास भी दिलाते हैं कि जो कोई भी उनकी शरण मे आएगा, वे उसे सच्चा पाहुल (अमृत) प्रदान करेंगे[3] और शत्रु भी उसका कुछ बिगाड नही सकेंगे[4]। इस प्रकार वे अपने योद्धाओ मे उत्साह और साहस के साथ साथ दृढ़ता, आशा और विश्वास भी पैदा करना चाहते थे। वे यह स्पष्ट कर देना चाहते थे कि वे अपने लिए नहीं वरन् उन्हे ही मुगलो के अन्याय और अत्याचार से मुक्त करने एव देश और धर्म की स्वतन्त्रता के लिए लड़ रहे हैं। वे प्रत्येक हिन्दू के हृदय मे अत्याचार और अन्याय के विरुद्ध विद्रोह की भावना जाग्रत करना चाहते थे। वे चाहते थे कि उनमें ऐसा स्वाभिमान जगे कि वे स्वय अन्याय और अनीति के विरुद्ध लडें। इसी लिए उन्होंने सिक्खों को उन मसन्दों का विरोध करने का भी आदेश दिया जो उनसे अनुचित कर लेते थे[5]। कहना न होगा कि राष्ट्रीय एवं सास्कृतिक प्रेम से युक्त ऐसी वीर-भावना का इस युग के अन्य वीर-काव्यो में सर्वथा अभाव है।

मध्यकालीन भारत की हिन्दू जनता रूढ़िग्रस्त, प्रमादयुक्त, आलसी और निरुद्यमी हो चुकी थी। उनके अदर एक नई कर्मण्यता एवं कर्मठता पैदा करने की ज़रूरत थी। ऐसी कर्मण्यता जो उनमें शक्ति, साहस, स्वाभिमान, एव उत्साह का संचार कर सके। 'विचित्र नाटक' मे गुरु जी ने इन भावो को जाग्रत करने का स्तुत्य कार्य किया है। परिश्रम का महत्व प्रतिपादित करते हुए उन्होने लिखा है कि जो हंसी मे भी परिश्रम एवं उद्यम करेगा वह सभी सुखो और सिद्धियों को प्राप्त करेगा[6]।

---

1 विचित्र नाटक, १४ : ६–११
2. वही, " " "
3. वही, १४ : १८
4. वही, १४ : १२
5. वही, १४-११-१२
6. वही, १४-१५।

'विचित्र नाटक' (अपनी कथा) में गुरु गोबिन्दसिंह एक वीर, साहसी एवं यशस्वी शूरवीर, कुशल सेना-संचालक, राष्ट्र-प्रेमी धर्म-रक्षक, दुष्ट-संहारक एवं संत-उद्धारक, निर्भीक, पराक्रमी, दृढ़-निश्चय, आशावादी, आस्थावान, एवं विनम्र राष्ट्रनायक के रूप में सामने आते हैं। वे एक महान् अभियान का संगठन और संचालन करने में समर्थ हैं। उनमें औदार्य भी है और साहस भी, उत्साह भी है और विनम्रता भी। वे गजनवी और चंगेजखां की भांति शक्ति संचित कर अत्याचार और अन्यायपूर्ण राज-भोग करने वाले योद्धा नहीं हैं, वरन् वे शक्ति संगठन ही अत्याचार और अन्याय का विनाश करने के लिए करते हैं। वे बाह्याचारों, पाखंडों एवं जाति-पाति के कट्टर विरोधी और अकालपुरुष के सच्चे सेवक और भक्त हैं।

'विचित्र नाटक' में कुल १४ अध्याय हैं। जिनमें से आठ में युद्ध-वर्णन है। रचना की उदात्त वीर-प्रवृत्ति का परिचय आरम्भ में ही मिल जाता है जब कवि अधर्मी और अत्याचारी शत्रु की विनाशक खड्ग की वंदना करता है :

खग खंड बिहंड खल दल खंड अति रण मंड बखंडं।
भुज दंड अखंड तेज प्रचंड जोति अमंड भान प्रभं।
सुख संता करणं दुर्मति दरणं किलबिख हरणं असि सरणं।
जै जै जग कारण स्रिसट उबारन मम प्रतिपारन जै तेगं।१.२।

अर्थात् तलवार टुकड़े अच्छी तरह करती है दुष्टों के समूह के टुकड़े करती है, युद्ध को बहुत सुन्दर बना देती है, ऐसी बलवान है। न टूटने वाला हाथ का डंडा है। बहुत तीक्ष्ण तेज वाली है। इसकी ज्योति सूर्य प्रभा को शोभाहीन कर देती है। यह तलवार संतों को सुखी करने वाली, दुष्टों को मर्दन करने वाली, पापों का नाश करने वाली है, यह मेरा आश्रय है, जगत की कारण, सृष्टि की पालक, मेरा प्रतिपालन करने वाली है। ऐ खड्ग तेरी जय हो[1] दुष्ट-विनाशक, संतों की रक्षक एवं धर्म-संस्थापक, कृपाण, कटार, तीर,

1. 'रामावतार' में दुष्ट विनाशक खड्ग की प्रशंसा में एक ऐसा ही छन्द आया है। (द्रष्ट छन्द संख्या ५८८)

तुफग, गदा, ग्रिसट, सैहथी आदि अस्त्र-शस्त्रो को भी उन्होंने इसी प्रकार नमस्कार किया है। कवि ने 'अकाल पुरुष' की भी 'बाण-पाणि', चक्रपाणि (१.८६, ८६) कह कर वंदना की है और उसके दुष्ट-विनाशक, असुर-संहारक, संत-रक्षक, वीर-रसात्मक रूप का वर्णन किया है।

'विचित्र नाटक' में कवि ने वीरो के व्यक्तित्व एवं उनके युद्धो का अत्यन्त सजीव, यथार्थ एवं ओजस्वी चित्रण किया है। योद्धाओं के भाव-अनुभाव, क्रोध, शस्त्र-सचालन, युद्ध-कुशलता, घाव-सहने, रक्त-प्रवाह आदि का सजीव चित्र नेत्रों के सामने आ जाता है।

युद्ध की भीषण गति एव युद्ध की विकरालता एवं भयानकता को प्रकट करने के लिए कवि ने भूत-प्रेत, वीर बेताल आदि के हंसने, नाचने, रक्तपान करने तथा गिद्धो, शृगालो आदि के मास नोचने आदि का भी वर्णन किया है। यही नही युद्ध में संलग्न वीरों की एक एक गति, क्रिया, अनुभाव आदि का अत्यन्त सूक्ष्म निरीक्षण करके उसका यथार्थ एवं सजीव चित्र अकित किया है।

भगाणी की युद्ध-कथा में कवि ने सामरिक विद्या एव युद्ध नीति का भी परिचय दिया है। युद्ध मे विजय प्राप्त करके वे उस नगर मे नहीं रहे, आनन्दपुर मे आ बसे और जिन्होने युद्ध मे गुरु जी का साथ नही दिया था, उन सभी को नगर से निकाल दिया। क्योंकि ऐसे व्यक्ति ही भेदियो का काम करके हानि पहुचाते है।

प्रबन्ध कथा की दृष्टि से 'विचित्र नाटक' एक शिथिल रचना है। कथा में न पूर्णता है, न सतुलन। युद्ध-प्रसग ही इसके सर्वाधिक रोचक एवं महत्वपूर्ण अश हैं। इन युद्ध-कथाओ मे भी कवि ने योद्धाओ की वीरता, शौर्य-प्रदर्शन एव प्रहार-प्रतिप्रहार (भिडन्त) और उसमे किए गए लोह-बर्षण का ही अधिक चित्रण किया है। युद्ध-कथा का सम्पूर्ण इतिवृत्त नही दिया। उसके कारणों, दोनो पक्षो की तैयारी, सेना प्रस्थान, दूत भेजने, वीरो की साज-सज्जा, उनकी ललकार-प्रतिललकार गर्वोक्तियो, व्यूह रचना, छावनी डालने, मार्ग मे विश्राम करने, आक्रमण करने, घेरे मे पड़ी सेना की कठिनाइयों आदि का चित्रण उन्होंने अधिक नही किया। उन परिस्थितियो एव कारणों के निरूपण से जिनका

उनके अनुयायियो को पूरा ज्ञान था कथा को विस्तार देने की आवश्यकता गुरु जी नही समझते थे। जिस उत्साह से उन्होने ये युद्ध लड़े, उसी उत्साह से वे उनकी भिडन्त का वर्णन करते हैं। अनावश्यक इतिवृत्त-विस्तार से उसकी गति को शिथिल बनाना नही चाहते। इन भीषण युद्धों का सजीव, ओजस्वी, गतिशील, ध्वन्यात्मक एवं उग्रतापूर्ण चित्रण करने में वे पूर्ण सफल रहे हैं।

निसाण, दुदंभि, तबले, आदि रण-वाद्यो के तुमल-नाद से भीषण रूप धारण किए हुए युद्ध में योद्धाओ के क्रोध से उत्तेजित होकर जूझने, घोड़ो के हिनहिनाने, जवानों के गरजने, कृपाण और सैंहथी के सडकने, परशु के छड़कने, तलवारों की कटाकट, गोलियो की तड़ातड़, योद्धाओ की धुका-धुक्क और जवानो की हत्था-हत्थी आदि का ओजपूर्ण एव सजीव चित्रण किया गया है। ध्वन्यात्मक शब्द युद्ध का ध्वनिपूर्ण वातावरण प्रस्तुत करने मे सहायक हुए हैं।

हुसैनी युद्ध मे कवि ने सेनापति के मिथ्याभिमान एवं गर्व का भी मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है।

युद्ध-भूमि के विकराल, भीषण एव भयावह चित्र प्रस्तुत करने के लिए कवि ने युद्ध-भूमि में टूटे हुए अस्त्र-शस्त्रो, क्षत-विक्षत योद्धाओं, बिखरे हुए रुड मुडो, लोथो पर लोथो के गिरने, खाली फिरते घायल घोड़ो, रक्त प्रवाह एव उन पर मंडराते गिद्ध, शृगाल एवं कक तथा नाचते भूत-प्रेतों आदि का भी विशद चित्रण किया है। कही कहीं योद्धाओं क अनुभाव भी सजीव रूप मे प्रकट हुए हैं।

वस्तुत: भाव-भंजना, युद्ध कथा वर्णन एवं उद्देश्य की महानता के कारण 'अपनी-कथा' एक उत्कृष्ट रचना है।

'दशम ग्रथ' मे दूसरे प्रकार की रचनाए पौराणिक आख्यानो के रूप मे आई हैं। इस मे मच्छ, कच्छप, नर, नारायण, मोहिनी, बराह, नृसिंह, बावन, परशुराम, ब्रह्मा, रुद्र, जालन्धर, विष्णु, दुर्गा, अर्हन्तदेव, मनु, धन्वन्तरि, सूर्य, चन्द्र, राम, कृष्ण, निहकलकी, बौद्ध आदि की अवतारों की कथाओं का निष्ठापूर्वक वर्णन किया गया है। ये कथाएं मुख्यत. शिवपुराण (बराह)

भागवत पुराण पद्मपुराण नृसिंह राम ब्रह्म वैवर्त ब्रह्माण्ड भविष्य मार्कण्डेय (ब्रह्मावतार) हरिवंशपुराण (धन्वन्तरि) आदि से ली गई है। आरम्भ मे कवि ने ब्रह्म के स्वरूप एव पृथ्वी पर अवतार आगमन के कारण एवं उद्देश्य का निरूपण किया है। जब पृथ्वी पर असुरो की शक्ति और आतक बढता हे तथा सत दुखी होते है तो उनके विनाश के लिए और संतो के उद्धार के लिए अवतार यहा आते है (१·२)

इन कथाओं में कच्छप मच्छ, नर, नारायण, मोहिनी, बराह, अर्हन्त, धन्वन्तरि, मनु, सूर्य, चंद्र, आदि अवतारो से संबन्धित प्रसंग अत्यन्त सक्षिप्त है। अधिक विस्तार 'रामावतार' तथा 'कृष्णावतार' को ही दिया गया है। वस्तुतः, यह ही दो रचनाए स्वतत्र प्रबध की कोटि मे रखी जा सकती है, इनमे भावो की विशदता, मार्मिकता एव सजीवता है। इनमे वीरों का शौर्य और उत्साह, स्त्री पुरुष का रूप-चित्रण, नख-सिख, प्रेम, मिलन, विरह, वन, पुष्प, लता, नदी, मेघ, वर्षा आदि से सम्बन्धित प्रकृति चित्रण एव, बारह-माहा, युद्ध, जन्म एव विवाहोत्सव आदि के आकर्षक एवं प्रभावशाली वर्णन तथा विदग्धतापूर्ण एवं रोचक संवाद उपलब्ध है। छन्द-वैविध्य, अलकार-सौष्ठव एवं रचना-कौशल की दृष्टि मे भी ये रचनाए महत्वपूर्ण है।

२. रामावतार :

'रामावतार' उच्च नैतिक स्वर एवं उदात्त वीर-भावना से ओत-प्रोत एक उत्कृष्ट प्रवन्ध काव्य है। जिसमें 'वाल्मीकि रामायण', पद्म पुराण, भागवत, हनुमान नाटक आदि राम-काव्यों के आधार पर राम की 'बीन-कथा का वर्णन किया गया है।

कथा मे संतुलन एव प्रवाह पूरा नही है। राम कथा के सभी प्रसंगो को समुचित विस्तार भी नही दिया गया। कवि ने 'बीन बीन' कर कुछ ही प्रसंगो को अधिक उठाया है। बहुत से प्रसग तो 'इन बातन को इक ग्रथ बढै, तहितै कही थोरिए बीन कथा', कह कर चलता कर दिया गया है। राम कथा के मार्मिक प्रसगो पर भी कवि का अधिक ध्यान नही गया।

'रामवतार' मे कवि की रुचि युद्ध-वर्णनो मे ही अधिक है अन्य प्रसंगो का या तो उल्लेख मात्र किया है, या अत्यन्त संक्षिप्त वर्णन करके आगे बढ गया है। वह मार्ग की भूमियों-घटनाओ पर नजर जरूर डालता है, मगर वह वहा उतरता नही। उतरता वह युद्ध-भूमि मे ही है।

'रामावतार' के ८६४ छदो मे से लगभग ४२५ छन्द युद्ध-कथाओ से सम्बन्धित है। प्रबध-कथा की दृष्टि से यह एक शिथिल रचना है, परन्तु यह एक सफल 'वीर-काव्य' है और वीर-रसात्मक युद्ध-कथाओ का वर्णन कवि ने विशदता, सजीवता एव कुशलता से किया है।

इस के नायक 'भुए भार उतारने' के लिए असुरों का सहार और सतो का उद्धार करने के लिए अवतरित है, जिसके लिए उन्हे वीर-रूप धारण करना पडता है और उनके वीर चरित्र का ही इस रचना मे विशद आख्यान उपलब्ध है। यह विशुद्ध 'वीर-काव्य' है।

'कृष्णावतार' का भी 'बिचित्र नाटक' की चौबीस-अवतार कथाओ मे विशिष्ट स्थान है। यह 'भागवत' दशम स्कध के आधार पर रचित २४९२ छन्दों का एक बृहदाकार एवं उत्कृष्ट प्रबन्ध काव्य है। 'रामावतार' मे कवि का ध्यान मुख्यत युद्ध-वर्णन पर ही रहा है, अन्य महत्वपूर्ण प्रसंगो का अत्यन्त सक्षिप्त वर्णन किया गया है, या उल्लेख मात्र कर दिया है। परन्तु 'कृष्णावतार' में कवि ने कृष्ण के चरित्र का व्यापक एवं विशद चित्रण किया है।

इसके कथानक मे एक विशालनद की गम्भीरता, वेग एवं प्रवाह है। इस मे 'रामावतार' की भांति असतुलन भी नही है। कथानक का संतुलित एव सयमित ढग से विकास होता है और सभी प्रसंगो का यथायोग्य निरूपण किया गया है। उसमे जीवन की विविधता एव शक्ति है।

इसमें कृष्ण के जन्म, शिशु-सौन्दर्य, उसकी मोहक एव आकर्षक चेष्टाए, हाव-भाव एवं शिशु-कौतक, बाल क्रीडा एव नंद-यशोदा के वात्सल्य आदि के साथ कृष्ण द्वारा पूतना, शकटासुर, अघासुर, तृणावर्त, चढूर, वकासुर आदि

दैत्यो का वध करन, कृष्ण और गोपिओ क आकषण, प्रम, मिलन और अभिसार तथा गोपियो की आसक्ति, मोह, विलास, उल्लास, दीप्ति, गर्व, लज्जा, ईर्ष्या, जड़ता, उनकी विरहगत्त, अधीरता, विह्वलता, व्याकुलता, आतुरता, वेदना, उन्माद आदि का भी सजीव चित्रण किया गया, है। इन वर्णनो मे कहीं कही अश्लीलता भी आ गई है।

परन्तु कृष्ण-भक्त कवियों की भांति यहा इन रस-लीलाओ को इतना अधिक महत्व नही दिया गया है कि यह प्रतीत हो कि यह लीला गान करना ही कवि का उद्देश्य है।

'युद्ध-प्रबन्ध' इस रचना का मुख्य भाग है, जिसमे कवि ने कृष्ण के जरासध, शिशुपाल आदि के साथ अनेक युद्धो का विस्तृत वर्णन किया है। सम्भवत. हिन्दी के कृष्ण काव्य में यह पहला ग्रंथ है, जिसमे कृष्ण के युद्धो का इतनी विशदता और विस्तार से वर्णन किया गया है। सम्भवतः पहली बार इसी रचना मे कृष्ण एक असुर-संहारक, धर्म-सस्थापक, धर्मवीर एव युद्ध-वीर लोक-रक्षक के रूप मे चित्रित हुए हैं। कृष्ण के इतने विशद, व्यापक चरित्र को लेकर लिखा जाने वाला भी सम्भवतः यह पहला और अकेला प्रबन्ध है। ब्रज के कृष्ण-भक्त-कवियों ने तो उसके रसेश्वर रूप की रसिक लीलाओं में ही रस लिया है, वे उनकी युद्धवीरता से उत्साहित नही हुए। 'कृष्णावतार' की रचना युद्धोत्साह प्राप्त करने के लिये ही की गई थी। कवि ने अपने उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए एक स्थान पर लिखा है·

अवर वासना नाहि प्रम, धरम जुद्ध की चाइ (२४६१ कृष्णावतार)

खेद है कि यह युद्ध-प्रबन्ध अभी तक हिन्दी समीक्षकों द्वारा प्राय· उपेक्षित ही रहा है। 'दशम ग्रंथ' पर कुछ शोध प्रबन्ध लिखे जाने पर भी इसका समुचित मूल्यांकन नही हुआ।

इस रचना के द्वारा कवि कृष्ण-भक्ति का प्रचार करना नही चाहता। वरन् कस, जरासध आदि असुर उसके लिए अत्याचारी मुगल-शासको के प्रतीक थे। वे दिखाना चाहते थे कि उनके विरुद्ध वे उसी प्रकार से लड़ रहे है, जैसे कृष्ण असुरो के साथ लड़े थे। अपने अनुयायियो को इस धर्मयुद्ध के लिए उत्साहित करने के लिए ही वे कृष्ण की वीर कथाए सुनाते या सुनवाते थे।

'कृष्णावतार' में कृष्ण के जरासंध एव शिशुपाल आदि के साथ अनेक

युद्धों का पूरे ब्योरे के साथ सजीव, विशद एव ओजपूर्ण वर्णन किया गया है और योद्धाओ की चरित्रगत विशेषताओ का भी विशद निरूपण किया गया है। कृष्ण और बलराम की शूरवीरता, धैर्य, निर्भीकता, दृढ़ता, उत्साह, आत्म-विश्वास, साहस, औदार्य आदि का तो विशद चित्रण किया ही है. विपक्षी दल के वीरो के शौर्य, धैर्य, दृढ़ता, उत्साह, साहस, निर्भीकता, रणोल्लास, युद्ध-कुशलता, सेना-संचालन आदि का भी खुल कर वर्णन किया गया है। जरासध की वीरता का आदर्श इन शब्दों मे देखा जा सकता है।

कहा भयो मम ओर के सूर हने सग्राम।
लरबो मरबो जीतबो इह सुभटनि के काम।१८४८।

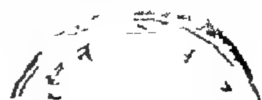
युद्ध मे लडकर विजय पाना या मरकर वीर-गति को प्राप्त करना ही सच्चे वीर का धर्म है। गीता मे भगवान कृष्ण ने भी इसी वीर-धर्म का प्रतिपादन किया है।

इस प्रबन्ध में कवि ने उद्धव एवं अक्रूर को भी साहसी शूरवीर दिखाया है। अब तक हिन्दी साहित्य उद्धव के व्यक्तित्व से कृष्ण के संदेश-वाहक के रूप में ही परिचित था। अक्रूर भी उनको लिवा लेने के लिए ही ब्रज गए थे, परन्तु यहां वे भी एक पराक्रमी योद्धा के रूप मे सामने आते हैं। हिन्दी साहित्य मे सभवत. सर्वप्रथम ये पात्र यही योद्धा रूप मे चित्रित हुए हैं।

'कल्कि अवतार' भी ५८८ छंदो का वीर रस प्रधान खण्ड-काव्य है जिसमे आसुरी शक्तियो पर दैवी शक्तियो की विजय दिखाई गई है।

विष्णु के २४ अवतारो के अतिरिक्त 'दशमग्रथ' मे ब्रह्मा एवं रुद्र अवतारो की कथाओं का भी निरूपण किया गया है। ब्रह्मावतारों में वीररस नहीं है, परन्तु रुद्रावतार-कथा भी वीर रस प्रधान है। इस प्रबन्ध मे ३५८ छद है और युद्धो का ओजस्वी एव सजीव चित्रण हुआ है।

'दशम ग्रंथ' मे संकलित 'चण्डी चरित्र' (चण्डी चरित्र उक्ति विलास एव चण्डी चरित्र द्वितीय) भी वीर रसात्मक रचनाएं है। इनमे कवि ने देवी के युद्धो का ही वर्णन किया है, अन्य किसी भी प्रसंग को महत्व नही दिया। साम्प्रदायिक



सिद्धान्तो, उपासना-विधि, मर्यादा अथवा नैतिक मूल्यो का इसमे कही भी विवेचन नही हुआ। ये काव्य-ग्रथ भक्ति-ग्रंथ के रूप में न लिखे जाकर वीर-काव्यो के रूप मे लिखे गए हैं। वस्तुत., दशमगुरु ने देवी के दुष्टदमनकारी युद्धों मे उसके पराक्रम और शौर्य प्रदर्शन को अपनी युग-परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य मे आका और हिन्दुत्व और देश की उस सकटकालीन स्थिति मे उसे शुद्ध शक्ति के रूप में ग्रहण किया। 'चण्डी चरित्र' असुर संहार (यवन अत्याचारी) के लिए भारतीय वीर-शक्ति का आह्वान करने वाला शक्ति काव्य है।

'दशमग्रंथ' मे चौबीस-अवतार एव चंडी की कथाओं का निरूपण अवश्य किया गया है, परन्तु उनमे कही भी यह नहीं कहा गया कि वे इन देवी-देवताओ अथवा अवतारों के ब्रह्मत्व मे विश्वास रखते हैं। उनके अनुसार ये सभी अवतार कीडो के समान है, करोड़ों की सख्या में हैं, जिन्हे परमात्मा बनाता है और फिर नष्ट कर देता है। पुराणो मे जैसी अवतार कथाए वर्णित हैं, उन्हे कवि ने उसी रूप में चित्रित कर दिया है। इन्हे ग्रहण इसलिए किया गया है कि उन्हे इन कथाओं की दुष्टदमनकारी प्रवृत्ति से अपने उद्देश्य की सफलता मे बल मिलता था और उनके अनुयायियो को उत्साहित करने मे भी वे सहायक हो सकती थीं और हुईं। वे इन अवतार-कथाओ से उनके हृदय में धर्मयुद्ध के लिए अतुल चाव एवं उत्साह पैदा करने में सफल हुए। परन्तु ऐसा करने से वे कदापि अवतार-वादी सिद्ध नही होते। यदि जायसी, कुतबन, मंझन जैसे सूफी कवि हिन्दू कहानियों को अपनाने से हिन्दू नही हो जाते, बल्कि सूफी ही रहते हैं, वरन् उन कथाओ के माध्यम से सूफीमत का प्रचार करने मे अधिक सफल रहते है, तो गुरु गोबिन्दसिह अवतार-कथाओ का वर्णन करने मात्र से अवतारवादी भावना मे विश्वास रखने वाले कैसे हो सकते है, जब कि इन अवतार-कथाओ मे भी स्थान स्थान पर—आरम्भ अथवा अत में भी वे इन अवतारों एवं देवी-देवताओं के ब्रह्मत्व का खंडन करते रहे है।

वस्तुतः गुरु गोबिन्दसिह ने पुराणों की अवतार-कथाओ को अवश्य ग्रहण किया, परन्तु अवतारवाद में उन्हें विश्वास नही। उन्होने इन अवतार कथाओ को इस रूप मे ढाला है कि उनसे अवतारों के प्रति भक्ति उत्पन्न

नही होती, जैसा कि पुराणों का उद्देश्य है, वरन् धर्मयुद्ध के लिये उत्साह और प्रेरणा मिलती है। उन्होने लिखे ही ये अपने अनुयायियो मे अन्याय एवं अत्याचार के विरुद्ध लड़ने का उत्साह उत्पन्न करने के लिए थे और इसमे युद्ध प्रसगों को ही अधिक विस्तार दिया गया है।

निर्बल और असहाय हिन्दू जनता मे नया जीवन डालने के लिए तथा उनक सुप्त क्षत्रियत्व को जगाने के लिए ही ये वीर-कथाए लिखी गई हैं। ऐसी उत्साह पूर्ण एव साहसी कथाए किसी भी व्यक्ति में अपने धर्म और देश की रक्षा के लिए धर्म-युद्ध करने का अतुल उत्साह और साहस उत्पन्न कर सकती हैं।

'दशम ग्रथ' की इन सभी रचनाओ में युद्ध का विस्तृत और विशद चित्रण हुआ है। यद्यपि उनमें योद्धाओ की भिड़ंत अथवा प्रहार-प्रतिप्रहार की प्रधानता है और उसका अत्यन्त ओजस्वी, उग्रता-पूर्ण, प्रचड एव भीषण वर्णन करने मे कवि पूर्ण सफल रहा है। द्वन्द-युद्ध, दो दलों के पारस्परिक युद्ध एव एक योद्धा के अनेक सैनिको से जूझने के चित्रण मे भी उसे पूर्ण सफलता मिली है, फिर भी सेना प्रस्थान, युद्ध-भूमि की विकरालता, योद्धाओ की वीरता एव शौर्य-प्रदर्शन तथा उनकी उत्साहपूर्ण उक्तियो आदि का भी सजीव चित्रण किया गया है।

सेना प्रस्थान—

'रामावतार', 'कृष्णावतार', 'चण्डी चरित्र' आदि में अनेक स्थानों पर कवि ने सेना-प्रस्थान का आतंकपूर्ण एव सजीव चित्रण किया है। इनके अतिरिक्त मत्स्य (४१–४२), नर नारायण (१७–१८), वराह (५–१४), परसराम (१२–१३) रुद्र (१८–३२), जालन्धर (१५–२०), सूर्य (१०–१८) आदि मे भी सेना-प्रस्थान का चित्रण हुआ है।

युद्ध-भूमि—

युद्ध-भूमि में जूझते हुए वीरों, टकराते हुए अस्त्र-शस्त्रो, शरीर को बेधते हुए तीरों, हताहत होते हुए योद्धाओं, भीषण ध्वनि करते हुए रण-वाद्यों, रक्त-

रंजित-भूमि, टूटते हुए खोल, ढुलकते हुए ढोल, कट कर गिरते हुए अंगों, बिखरे हुए टोपों, कटे हुए धड़, फटे हुए सिर से उठते हुए रुधिर के छींटे, कटी हुई परन्तु फड़कती हुई भुजाओ, रक्त और धूलि मे लोट-पोट होते हुए क्षत-विक्षत अश्वों, घायल चिंघाड़ते हुए हाथियो, फिसे हुए शिरस्त्राण, योद्धा रहित त्रस्त घोड़ो, शस्त्रों से उठते हुए अग्नि पुंज, कराहते हुए सैनिको, भागती हुई भीड़, घूम कर चक्कर खाकर गिरते हुए जवानो, टूटे हुए अस्त्र-शस्त्रो, मांस, मज्झा और रुधिर पर लपकते हुए काक, कंकों एवं गिद्धो, चीत्कार करती हुई डाकनियों, रुधिर पान करती हुई जोगनियों, नाचते हुए वीर-बेतालो, आदि का विशद वर्णन किया गया है।

युद्ध-भूमि के इन भयावह, विकराल और वीभत्स दृश्यों को सजीवता प्रदान करने के लिए उनकी तुलना टकराते हुए पर्वतों, फुकारते हुए सर्पो, अमावस्या मे जलते हुए मसानो, ढहते हुए कगारो, महाज्वाल मे भस्मीभूत होते हुए तृण-कुशों, उच्छृंखल जलनिधि आदि से की गई है।

युद्ध के ऐसे विकराल एवं भयावह दृश्य कायरो को भले ही युद्ध से विमुख करते हो, शूरवीरो मे तो ऐसे भीषण युद्ध ही आकर्षण और उल्लास उत्पन्न करते हैं।

रण-वाद्य, अस्त्र-शस्त्र, तनत्राण, शिरस्त्राण एवं वाहन आदि--

'दशम ग्रंथ' की वीर-रसात्मक रचनाओं के युद्ध-वर्णन मे प्रयुक्त होने वाले संख, घंटा, ढोल, मृदंग, नफीरी, तबला, बंब, नगारे, परढे आदि रण-वाद्यों, बरछी, कमान, गदा, बाण, असि, कृपाण, मूसल, हल, चक्र, मुगदर, त्रिशूल, करधर, सैंहथी, सांग, बरछा, शक्ति, निषंग, तुपक, तुफंग, कवच, टोप आदि अस्त्र शस्त्रो एवं हाथी, कई जातियो के घोड़ो, रथ और सिंह आदि वाहनो का वर्णन हुआ है। कवि ने कही कही मदिरा, अफीम, भांग आदि के नशो के सेवन का भी उल्लेख किया है।

युद्ध-विधि--

इसी तरह इन युद्धों में शस्त्र-संचालन की अनेक विधियो एवं युद्ध-कला की अनेक युक्तियो पर भी प्रकाश डाला गया है, जिसका उद्देश्य अपने

अनुयायियों को युद्ध-विद्या से पारगत करना था। कवि ने तत्कालीन युद्ध-विद्या की ओर कई स्थानो पर सकेत किया है। पहाड़ी राजा काठ के किले बना कर आक्रमणकारी से लड़ते थे, युद्धो मे तोप का बडा महत्व था, कई बार रात के समय आकस्मिक आक्रमण कर दिया जाता था, हाथियो से दुर्ग-द्वार तुड़वाने का काम लिया जाता था, युद्ध के समय सेनाओ के मार्ग मे पड़ने वाले गावो को लूट लिया जाता था, युद्ध मे साथ न देने वाले लोगो को अपने स्थान से निकाल दिया जाता था, लूट का माल बहुधा सैनिकों मे बांट दिया जाता था, शत्रु नगर का घरा डाल कर भीतर के सैनिको के लिए मार्ग बंद करके उनके लिए अन्न संकट उत्पन्न कर देते थे, उस ओर जाने वाले जल-स्रोतों को या तो रोक दिया जाता था, या उसमें मुर्दा पशु फेंक कर उसके जल को खराब कर दिया जाता था, इत्यादि। कुछ स्थानों पर सैनिक मनोविज्ञान का भी अच्छा परिचय दिया गया है।

शूरवीरो का व्यक्तित्व—

युद्ध वर्णन के प्रसंगों में शूरवीरो के व्यक्तित्व, उनकी आकृति, डील डौल, साज सज्जा, वेश भूषा, वीरता, साहस आदि के वर्णन का महत्वपूर्ण स्थान है। 'दशम ग्रथ' मे युद्ध कार्य मे व्यस्त योद्धाओं के व्यक्तित्व का अकन सूक्ष्मता और सजीवता से किया गया है। ऐसे स्थलो पर कवि ने निष्पक्षता से काम लिया है और शत्रुपक्ष के वीरों की वीरता की भी प्रशसा की है। उनके शौर्य, सैनिक-शक्ति, युद्ध-कुशलता, अस्त्र-शस्त्रों के प्रहार आदि का वर्णन विशदता से हुआ है। इससे रचना मे एक कलात्मक सौन्दर्य भी आ गया है, क्योंकि समान बल वाले योद्धाओ के साथ युद्ध ही घोर संग्राम के रूप में सामने आते हैं और इस से वर्णन में सजीवता, स्वाभाविकता एव ओज का उचित प्रदर्शन हो सकता है। इसी प्रकार जहा विपक्षी दल के कायरो के भय और उनकी पराजय का वर्णन किया है, वहा स्वपक्ष के वीरों की कमजोरियो पर भी प्रकाश डाला गया है।

'दशम ग्रथ' के अनुसार सच्चा शूरवीर भूमि मे हंसते हंसते प्राणो की बलि दे देता है। ऐसा वीर वीर-गति पाकर विमानारूढ़ होकर स्वर्ग को

जाता है और अप्सराए उसको वरण करती है। नि.सदेह यह भावना वीरो को धर्मयुद्ध के लिए उत्साहित और प्रेरित करती है। लेकिन 'दशम ग्रंथ' मे ऐसे भी वीर है जिन्हे विमानारूढ होकर स्वर्ग जाने की अपेक्षा रणभूमि मे निरन्तर लड़ते रहना अधिक रुचिकर है। मारू बाजे उन्हे सुहावने लगते है और युद्ध क्षेत्र उनके लिए क्रीड़ा क्षेत्र है।

ऐसे वीरो को कवि ने स्वामि-भक्ति एव धर्म-भावना मे प्रेरित होकर युद्ध-भूमि मे उत्साह से लड़ते दिखाया है तथा उनके वीरोचित रणोल्लास की भी व्यंजना की है। युद्ध के लिए वे उत्कठित दिखाई पडते है। कोई प्रति-द्वन्द्वी न मिलने पर वे रुद्र से यही वर मागते हैं कि कोई उनके साथ जूझने वाला हो। इन वीरो का व्यक्तित्व वहां और भी निखर आता है, जब वे मृत्यु उपरान्त भी युद्ध करना चाहते है। हाथ पाव कट जाने पर भी लडते रहते हैं, सिर के कट जाने पर कबंध ही खड्ग चलाता रहता है।

'दशम ग्रंथ' मे वीरता के उच्च आदर्श के भी दर्शन होते है। शत्रु पक्ष के वीरो के मूर्छित हो जाने पर पर-पक्ष के वीर स्वयं उन्हे जलपान भी करवाते हैं, इतना समय देते है कि स्वस्थ होकर वे उनके साथ पूरी शक्ति से फिर युद्ध कर सके।

'दशम ग्रथ' में कही कही योद्धाओ की बाह्य एवं स्थूल विशिष्टताओ का भी वर्णन किया गया है और साथ ही उनके अफीम, भाग, मदिरा आदि के सेवन से मस्त होने का भी उल्लेख किया है। इन रचनाओ मे गुरु गोबिन्दसिंह, दुर्गा, जरासंघ, राम, रावण, मेघनाथ, कृष्ण, बलराम, अमिटेस, खडगेस, गजसिंह, अमतेस आदि अनेक वीरों के सबल और सशक्त व्यक्तित्व उभर कर सामने आते हैं।

गर्वोक्तिया एवं अनुभाव—

शूरवीरों की उत्साहपूर्ण उक्तियां एवं अन्य अनुभाव उनके व्यक्तित्व को सजीवता प्रदान करते हैं और उनके शौर्य, साहस, दृढता, निश्चय, निर्भीकता आदि की व्यंजना करते है। 'दशम ग्रंथ' में बहुत से वीरों की ओजस्वी

गर्वोक्तियो और जोश के साथ शस्त्र संचालन, दांत पीसने, मुखाकृति एव नेत्रो के लाल होने आदि अनुभावो के दर्शन होते हैं। 'अपनी कथा', 'रामावतार', 'कृष्णावतार' तथा 'चण्डी चरित्र' मे ऐसी बहुत सी गर्वोक्तिया देखी जा सकती हैं। 'कृष्णावतार' इस दृष्टि से एक विशिष्ट रचना है।

छद :

'दशम ग्रन्थ' मे युद्धो के गतिशील, वेगपूर्ण एव ध्वनि-युक्त चित्र प्रचुर प्रमाण मे उपलब्ध होते हैं। युद्ध के दृश्यो को तीव्रता, वेग एव क्षिप्रता प्रदान करने के लिए कवि ने अनेक विधियो से काम लिया है। उन्होने युद्ध वर्णन मे छन्द वैविध्य एव छन्द परिवर्तन का बहुत प्रयोग किया है। उदाहरणार्थ चण्डी चरित्र (द्वितीय) के सत्रह पृष्ठीय युद्ध वर्णन मे सत्रह छन्दो का प्रयोग हुआ है और सतावन बार छन्द परिवर्तन हुआ है। इस छन्द-वैविध्य एवं छन्द-परिवर्तन से एक तो युद्ध वर्णन मे एकरसता तथा नीरसता नहीं आने पाती, दूसरे अनुकूल छन्द के प्रयोग ने युद्ध की गति का सही चित्रण हो जाता है। यहा कवि ने युद्ध का भीषण और विकराल वातावरण प्रस्तुत किया है। इसलिए क्षिप्रगति एवं लघु छन्दों का प्रयोग अधिक किया है। दीर्घ छन्दो मे भी आन्तरिक तुक के प्रयोग से तीव्रता लाने का प्रयत्न किया गया है। युद्ध की ध्वनी को चित्रित करने के लिए उन्होने सगीत-छन्दों का प्रयोग किया है। 'दशम ग्रथ' मे युद्ध की मन स्थिति, व्यापार तथा वेग के अनुकूल समर्थ एवं उपयुक्त छन्दों का प्रयोग कवि की काव्य-क्षमता का परिचायक है।

इन युद्धों मे प्रयुक्त प्रमुख छन्द हैं—दोहा, चौपई, सोरठा, कबित्त, सवैया, रसावल, भुजंगप्रयात, पद्धरि, अडिल, तोमर, तोटक, मधुभार, रूआवल, नवनामक, त्रिभगी, नराज, संगीत-भुजंगप्रयात, संगीत-मधुभार, संगीत-नराज, बेलीबिंद्रुम। त्रिगदा, त्रिडका, त्रिणणिण, अजबा, अकबा, दोहा आदि 'कृष्णावतार' के प्रमुख छन्द है जिनमे युद्ध की भीषण गति एव ध्वनि का चित्रण हुआ है तथा 'चण्डी-चरित्र' उक्ति बिलास' मे सवैये एव कबित्त से ही अधिक काम लिया गया है।

भाषा :

भाषा पर कवि का असाधारण अधिकार है। उसकी भाषा मे शक्ति एव सामर्थ्य है और शैली प्रवाह-पूर्ण और प्रभावशाली है। एक कुशल जडिया की भान्ति शब्दों का चयन करके उन्हे उपयुक्त स्थान पर जड़ कर वह अनुकूल वातावरण की सृष्टि कर लेता है। उसके पास शब्दो का अक्षय भडार है। पजाबी, फारसी, सस्कृत, अरबी, अपभ्रश, डिंगल आदि के प्रचलित एवं अप्रचलित शब्दों का प्रयोग करते समय भी वह संकोच नहीं करते। यदि वे शब्द युद्ध का अभिष्ट वातारवण निर्मित करने मे सहायक हो। उनकी वर्ण-योजना, अक्षर-विन्यास तथा शब्द-चयन ऐसा है कि युद्ध की गति एवं ध्वनि के अनुकूल वातावरण उपस्थित हो जाता है। आवश्यकता अनुसार कवि शब्दों के रूप या उच्चारन को विकृत करके या नये अर्थो मे उनका प्रयोग कर लेता है। अभिव्यक्ति को सशक्त बनाने के लिए बहुअक्षरात्मक-शब्दो एवं मिश्रित-विशेषणों का भी प्रयोग किया गया है।

इसके अतिरिक्त अनुकरणात्मक-शब्दों, अनुप्रासयुक्त-वर्ण-योजना, सयुक्ताक्षरों, अनियमित अनुनासिको, टकारात्मक एव रकारात्मक व्यंजनो, ध्वनि-शब्दों एव संगीत-शब्दो के प्रयोग से वीरसानुकूल ओजगुण द्वारा भी युद्ध वर्णन मे सजीवता लाने का प्रयत्न किया गया है। प्रत्येक शब्द से युद्ध के अनुकूल ध्वनि निकलती है और तदानुरूप भाव का प्रेषण होता है। कवि ने बहुधा ऐसे शब्दों का प्रयोग किया है, जिन से खड्गो की खटाखट, कटारो की कटाकट, तोपो की तडातड तथा धौसो की धुकार सुनाई पड़ती है। शब्दो की ध्वनि युद्ध के वातावरण के अनुरूप है। प्रत्येक शब्द अपने मे एक ध्वनि-चित्र लिए हुए है। त्रिडडिड, ब्रिडडिड, द्रिडडिड, भ्रिडडिड, ट्रिडडिड ज्रिडडिड आदि शब्द किसी विशेष अर्थ के सूचक नहीं है फिर भी अपनी ध्वनि से वे एक विशिष्ठ वातावरण की सृष्टि करते है। ऐसे शब्दो से युक्त छन्दों के उच्चारण से भी युद्धोत्साह की वृद्धि होती है। वस्तुतः कवि चित्रात्मक, बिम्ब-विधायक, ध्वन्यात्मक एव भाव-व्यंजक शब्दों के प्रयोग मे अत्यन्त निपुण है।

चित्रात्मकता :

'दशम-ग्रन्थ' की यह भी विशिष्टता है कि उसमे युद्ध के गत्यात्मक चित्र बहुत मिलते है। डा० हरिभजन सिह का कथन है कि ग्रथ में युद्ध के वर्णन की कहीं से कोई पक्ति पढें तो चित्र, ध्वनि, गति और भावातिरेक का सुन्दर सयोग दृष्टिगोचर होगा। 'थका हुआ शरीर, खून के छीटे, शरीर पर घाव, शून्य पीठ घोडा आदि के चित्र भी ध्वनी के सयोग से रहित नही हैं। उनके युद्ध वर्णनों में इतनी गति है कि वे शस्त्र का भी स्थिर अवस्था मे वर्णन नही करते। म्यान मे बन्द तलवार, शूरवीर की कमर में लटकती कृपाण, तुणीर में विश्राम करते बाण, अथवा शूरवीर के हाथ में स्थिर नेजा, बरछा आदि के स्थिर चित्र इन युद्धों मे नही मिलेगे। उनके अस्त्र-शस्त्र अनवरत् अविश्राम की अवस्था में दिखाई देते है।'[1]

अलकार :

युद्ध-दृश्यो को और अधिक चित्रमय एवं सजीव बनाने के लिए कवि ने चित्रमय अलंकार-योजना के रूप मे अपनी बिम्ब-विधायिनी कल्पना-शक्ति से भी पूरा काम लिया है। युद्ध के गतिमय एव ध्वनिपूर्ण दृश्यों के अनुकूल समान बिम्ब सामने लाकर उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा विरोधाभास, उदाहरण आदि अलकारो के रूप मे प्रस्तुत किया गया है। विशेष रूप से 'चण्डी चरित्र उक्ति विलास' और 'कृष्णावतार' मे उनकी प्रभावशाली एवं चित्रात्मक उपमाओ और उत्प्रेक्षाओं का कमाल देखा जा सकता है। गेरू के पनाले के समान रक्त प्रवाह, तिल के समान शत्रु को पीसना, पृथ्वी को फोड कर निकलने वाले बीज की भांति तीर का शरीर बेध कर निकलना, मक्खन की मटकी फूटने पर उठने वाले मक्खन के छीटो की तरह फूटे हुए सिर मे से खून के छीटे उठना, नक्षत्र अथवा वृक्ष के पत्तो या फल एवं कद्दू की भाति सिर का टूट गिरना, आदि अनेक ऐसे चित्र हैं जहा कवि ने अनूठी उपमान-योजना प्रस्तुत की है। दामिनी सी चमक, बादल सी गरज, वर्षा सी तीरों की बौछार, आदि में भी

१. गुरुमुखी लिपि में हिन्दी काव्य पृ० २२१, २२६, २५६



प्रेषठीय उपमान देखे जा सकते है। पौराणिक घटनाओं, प्रकृति, वन, पर्वत, पवन, वर्षा, घन, पुष्प, वृक्ष, व्यापार, रीति-रिवाज, विवाह, होली आदि से दर्जनो ऐसे बिम्ब इस ग्रन्थ मे आए है । परन्तु कही भी अलंकार अभिव्यक्ति पर हावी नही होने पाए । वे सर्वत्र रसोत्कर्ष मे सहायक होकर ही आए है ।

इस प्रकार हम देखते है कि 'दशमग्रथ' का अधिकाश भाग वीररस से पूर्ण है और कवि ने इसमे युद्धो का अत्यन्त सजीव, गतिशील, वेगपूर्ण एव ओजस्वी चित्रण किया है । वीरो के उत्साह और उल्लास की अभिव्यजना भी कुशलता पूर्वक की गई है। इस ग्रथ का युद्ध वर्णन 'रासो' ग्रथों की टक्कर का है । हिन्दी का कोई भी अन्य ग्रंथ इस दृष्टि से उसका मुकाबिला नहीं कर सकता ।

इसमें वीरता का स्वर इतना प्रबल है कि काम, क्रोध आदि मानसिक विकारों की व्यंजना भी दुर्जन शत्रुओ के रूप मे की गई है । जिन पर विज्य प्राप्त करने के लिए शील, सन्तोष, संयम, विवेक आदि शूरवीरों की सेना संगठित करनी पडती है। गुरु गोबिन्दसिह ने इन वीरो के आकार, वाहन एवं युद्ध का भी सजीव वर्णन किया है । इसी प्रकार युद्धेतर प्रसगो मे भी युद्ध के वातावरण का प्रभाव दिखाई पडता है । शृगार, वात्सल्य, करुणा आदि से सम्बन्धित प्रसगो में अप्रकृत विधान रूप मे वीरता का भाव परिव्याप्त है । होली, नृत्य, मदिरालय आदि के रूप में युद्ध का वर्णन तो कई स्थानों पर किया गया है।

वस्तुत, 'दशम ग्रथ' एक ऐसी रचना है, जिसमे वीर रस का उदात्त रूप चित्रित हुआ है । इस मे युग-चेतना, राष्ट्रीय एवं सास्कृतिक-भावना के दर्शन होते है । इस रचना मे क्षत्रियत्व का तेज और स्वाभिमान है तथा धर्म एवं लोक रक्षा का भाव निहित है। इस रचना का ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक दृष्टि से इतना अधिक महत्व है कि हिन्दी साहित्य के इतिहास का जब भी पुनर्मूल्यांकन होगा तो उसकी वीर काव्य-परम्परा मे 'दशम ग्रन्थ' की इन वीर रचनाओ को महत्वपूर्ण स्थान देना पडेगा। पजाब के परवर्ती वीर-काव्यो पर 'दशम ग्रन्थ' की वीर-भावना और शैली का ही सर्वाधिक प्रभाव पडा है ।